भूमिका

सृष्टि के आरंभ से ही स्त्री और पुरुष का प्राकृतिक संबंध रहा है। इसी कारण वे आज भी एक दूसरे के पूरक हैं। प्रारम्भिक अवस्था से ही संघर्ष के सभी रूपों में उसकी बराबर की सहभागिता रही है। दोनों के पारस्परिक सहयोग से ही समग्र संस्कृति का विकास हुआ है। परस्पर एक दूसरे पर आश्रित होने के कारण ही एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं है।

किसी समाज में स्त्री की स्थिति उसकी सभ्यता का मानदण्ड होती है। स्त्री मानव जीवन के विविध रूपों में सहायता करती है उसके अनेक रूप है वह समाज में, परिवार में, माँ के रूप में, पत्नी के रूप में, प्रेमिका के रूप में, बहन, पुत्री आदि के रूप में आती हैं। इन सभी रूपों में एक माँ के रूप में उसका स्थान सर्वोपरि है। वह अपना सब कुछ त्यागकर प्रेम, दुलार, स्नेह एवं ममता को अपने पुत्र पर न्यौछावर कर देती है।

स्त्री सेवा की साकार मूर्ति है, क्योंकि वह केवल अपने लिए ही जीवन नहीं जीती बल्कि अपनी संतान एवं अपने परिवार के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। पत्नी के रूप में भी उसकी अत्यधिक प्रशंसा की गई है, उसे पुरुष की आत्मा का अर्द्धभाग कहा गया है पत्नी के बिना पुरुष को अपूर्ण ही बतलाया गया है। उसे पुरुषों का श्रेष्ठतम मित्र कहा गया है और सम्पूर्ण परिवार का उद्धार करने वाली माना गया है। भगिनी के रूप में वह भाई को अपना असीम स्नेह देती है, आदर्श माता एवं आदर्श पत्नी बनकर अपना गौरव प्रदर्शित करती है। पुत्री के रूप में माता-पिता को सुख प्रदान करती है। प्रेमिका के रूप में अपने प्रेमी को सब कुछ समर्पित कर देती है। इतना सब कुछ होने के बावजूद भी स्त्री आज भी अपने कष्टों, दुखों के साथ जीवन जी रही है। वह अपने सम्मान व अधिकार की लड़ाई नहीं लड़ पा रही है, इन सब कारणों के पीछे वर्चस्ववादी, पुरुषमानसिकता है, जो आज भी स्त्री को बराबरी का दर्जा नहीं देना चाहता है, परंपरा की आड़ में स्त्री को अपने अनुरूप रखना चाहता है ताकि शोषण की यह परंपरा बनी रहे।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में स्त्री पितृसत्तात्मक सत्ता के आधीन रही है। प्राचीन काल में जिन विदुषी महिलाओं का उल्लेख मिलता है वह एक अपवाद मात्र है। वह ऊंची जाति की स्त्रियां थी, निम्न जाति की नहीं, यथार्थ में तो महिलाओं को पढ़ने लिखने का अधिकार ही प्राप्त नहीं था भारतीय स्त्रियों में एक चेतना, परंपरा एवं गौरवबोध का एहसास कराने के लिए गार्गी, जैसी विदुषी दार्शनिक स्त्रियों का जिक्र किया जाता है। परन्तु वास्तविक रूप में ऐसी स्त्रियों की संख्या नगण्य है। वेद, पुराण, उपनिषद, आदि सभी ग्रन्थों में स्त्रियों की समानता के विरोध में बहुत सारी बातें कहीं गयी हैं, कुछ विशेष पात्रों को छोड़ दिया जाय तो, लगभग हर जगह स्त्रियों को अपमानित करने का प्रयास किया गया है।

इस्लाम में स्त्री गर्भ के की तुलना खेत से की गई है जिसमें पुरुष बीज बोता है और संतान का स्वरूप बीज की प्रकृति से निर्धारित होता है तथा खेत का मालिक पुरुष को बताया गया है इतना ही नही बल्कि पुरुषों से यह भी अपेक्षा की गई कि जिस लड़की या स्त्री से शादी करें वह उसकी उम्र से सोहल या अठारह वर्ष आयु में छोटी हो।

शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को अर्द्धांगिनी बताया गया है। जबकि महाभारत में स्त्री को भार्या की संज्ञा देते हुए कहा गया है कि – 'भार्या मनुष्य का आधा भाग है तथा श्रेष्ठतम मित्र है।' नारी का सामाजिक रूप उसके भावनात्मक रूप से काफी प्रभावित रहा है। सृष्टि में स्त्री तथा पुरुष की उत्पत्ति का केंद्र भी एक ही है। बृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है कि 'ब्रह्मा ने अकाकी न रहकर अपने आपकों दो भागों में विभक्त कर लिया है, जिसके दक्षिण अंश को पुरुष तथा वाम अंश को नारी की संज्ञा दी है।' शिव के अर्धनारीश्वर रूप में भी यही अवधारणा प्रतिध्वनित होती है। भारतीय जनता के लोकप्रिय ग्रंथो में भी नारी को लेकर बहुत प्रतिशोध भरा हुआ है,

'ढ़ोल गंवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी। '

मध्यकाल की जड़ता में भी स्त्री उसी तरह जकड़ी रही जैसे प्राचीन काल में थी, उसकी स्थिति में कुछ भी सुधार नहीं हुआ पर्दा –प्रथा का प्रचलन, मुसलमानों के आने से और भी दृढ़ हो गया।।

आधुनिक समाज के लिए स्त्री मुक्ति की अवधारणा काल्पनिक या अमूर्त नहीं है बल्कि एक मूर्त यथार्थवादी और ठोस अवधारणा है यह स्त्रियों के लिए वरदान साबित हुई है। क्योंकि यह उन सभी जड़ताओं और प्राचीन नियमों पर भी बखूबी प्रहार करती है जो स्त्री को बंधक बनाये रखना चाहती हैं। रूढ़ियों में जकड़े हुए लोग आज भी इसके समर्थन में पूरी मन:स्थिति के साथ नहीं जुड़ पाये है।

मानवतावादी दृष्टि कोण से देखा जाय तो अभी भी नारी की दासता पुरुषों के लिए कोई प्रतिष्ठा एवं स्वाभिमान का विषय नहीं रही है बल्कि मानवीय सभ्यता के लिए एक अभिशाप की तरह है। आज के स्त्री विमर्श का मूल स्वर प्रतिशोध नहीं है, बल्कि इसमें स्त्री मुक्ति की कामना, बराबरी सामाजिक न्याय, एवं अस्मिता को प्रमुख स्थान दिया जा रहा है। आज का स्त्री विमर्श यह मान कर चलता है कि स्त्री को शोषित करने में एक पुरुष जिम्मेदार नहीं है बल्कि पितृसत्तात्मक सिद्धांतों पर आधारित वह व्यवस्था है जो सदियों से चली आ रही है उनके अनुसार इस व्यवस्था के टूटने से ही स्त्रियाँ आजाद होंगी इसी स्त्रीवादी विमर्श को केंद्र में रखकर मधु काँकरिया का महत्वपूर्ण उपन्यास 'सेज़ पर संस्कृत' लिखा गया है जो समकालीन स्त्री विमर्श एवं 21 वीं सदी के स्त्री विमर्श को हमारे सामने लाता है तथा स्त्री के शोषण में धर्म, परंपरा, कुरीतियों और परिवार की बंदिशो को भी यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है।

'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में मधु काँकरिया ने मानव समाज व्यवस्था के कटु अनुभवों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है, उन्होंने इस उपन्यास में एक जुझारू, धैर्यवान और विद्रोही स्त्री की आंतरिक पीड़ा का बड़ा ही मार्मिक विश्लेषण किया है। धार्मिक चिन्तन और व्यवहार से आप्लावित संसार में स्त्री-जीवन कितना कठोर, क्रूर और भयावह हो सकता है, इसका याथार्थ चित्रण मधु

काँकरिया ने 'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में किया है। इस उपन्यास में आर्थिक विपन्नता में जकड़ी ऐसी माँ का चित्रण है जो अध्यात्म को मुक्तिमार्ग मानकर, यह चाहती है कि उसकी जवान बेटियाँ भी उसी मार्ग को अपना लें, ताकि उनके जीवन को नया आयाम मिले, क्योंकि उसकी धारणा है कि किसी स्त्री के साध्वी बन जाने पर परिवार का मान-सम्मान अनायास ही बढ़ जाता है, आर्थिक विपन्नता दूर हो जाती है। परिणाम स्वरूप छोटी बेटी तो माँ के पद-चिन्हों पर चल पड़ती है लेकिन बड़ी बेटी शुरू से अन्त तक धर्माडम्बरों का घोर विरोध करती है। साध्वियों की जीवन-स्थिति एवं उनके अंतर-वाह्य संघर्ष को मार्मिक शब्द देने वाले इस उपन्यास में जहाँ सामाजिक-आर्थिक विषमता को विस्तार दिया गया है, वहीं अन्याय और शोषण की अभिव्यक्ति को नई भाव-भूमि दी गई है।

यह उपन्यास धर्म और मनुष्य के संबंध के बनने की प्रक्रिया को बहुत ही सजीव रूप में दिखाता है। एक ही घर की तीन स्त्रियों का धर्म के प्रति दृष्टिकोण अलग-अलग है। माँ, जिसके लिए भय जीवन का पर्याय बन चुका है, जिस कारण से उसे धर्म से इतर कोई जगह दिखाई ही नहीं देती वहीं दूसरी तरफ बड़ी बहन 'संघमित्रा' जो युवा है और जिसने अपने पिता से जीवन-संबंधी संघर्ष को जाना है जीवन और धर्म को लेकर वह भावनात्मक कम और तार्किक ज्यादा है माँ के धार्मिक आग्रह और संघमित्रा के नकार के बीच में 'छुटकी' है जिसका बालमन न तो धर्म को पसंद करता है और न ही गूढ तार्किकता को, वह तो इन सब में भी खेल की वस्तु ढूंढा करती है।

धर्म के द्वारा स्त्री शोषण के विभिन्न स्तर इस उपन्यास में बखूबी चित्रित है। यदि इस संदर्भ में छुटकी को लिया जाए तो यह बात स्पष्ट रूप से नज़र आती है। कि धर्म के द्वारा स्त्री की भावनाओं और उसके स्व आदि को समाप्त कर दिया जाता है।जैसे छुटकी को न चाहते हुए भी उसे धार्मिक वाह्याचारों को ओढ़ना पड़ता है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध को चार अध्यायों में विभाजित किया गया है –

प्रथम अध्याय में दो उप-अध्याय हैं। प्रथम उप-अध्याय कथाकार मधु काँकरिया का समय और व्यक्तित्व को रेखांकित किया गया है दूसरे खण्ड में लेखिका की रचनाधर्मिता को प्रारम्भिक अवस्था से लेकर अब तक की अवस्था को दिखाया गया है।

द्वितीय अध्याय 'वर्तमान भारतीय समाज में स्त्री'। इस अध्याय को तीन उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। इसके प्रथम उप-अध्याय में समाज में महिलाओं की समस्या पर विचार किया गया है कि समाज में महिलाओं को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है दुसरे उप-अध्याय का शीर्षक है 'नारी को बनाने में धर्म की भूमिका' इस उप-अध्याय में यह विचार किया गया है कि नारी को बनाने में धर्म किस प्रकार अपनी भूमिका निभाता है और धर्म के नाम पर समाज किस प्रकार स्त्री का शोषण करता है। तीसरा उप-अध्याय 'रूढ़िवादी परंपरा और नई चेतना में स्त्री स्वर' इस भाग के अंतर्गत यह दिखाया है कि कैसे हमारी रूढ़िवादी परम्परों ने स्त्री को जकड़ रखा था लेकिन इन रूढ़िवादी परम्परों को स्त्री तोड़ रही है और उसमें नई चेतना का स्वर उभर कर सामने आ रहा है।

तृतीय अध्याय 'सेज़ पर संस्कृत में स्त्री और धर्म'। इस अध्याय को भी तीन उप-अध्याय में विभाजित किया गया है। इसके प्रथम उप-अध्याय में 'भारतीय समाज परिवार में रूढ़िगत संस्कार' इस उप-अध्याय के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि भारतीय समाज परिवार में जो रूढ़ियाँ हैं वह किस प्रकार से रूढ़िगत संस्कार बनते जा रहे है। उसके यथार्थ का अंकन उपन्यास के माध्यम से किया गया है। दूसरा उप-अध्याय 'समाज में धर्मगत बढ़ती कट्टरता'। इस उप-अध्याय में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि धर्म के नाम पर समाज में स्त्री को लेकर कैसे कट्टरता बढ़ती जा रही है। तीसरे उप-अध्याय में 'धर्म संस्कार और परिवार में स्त्री' का निर्माण कैसे होता है और धर्म संस्कार और परिवार कैसे स्त्री के शोषण में अपनी भूमिका निभाते हैं।

चतुर्थ अध्याय 'मधु काँकरिया के उपन्यास कि भाषा और शैलीगत विशेषताएँ'। इसके प्रथम उप -अध्याय 'भाषागत विशेषता और दूसरा उप-अध्याय शैलीगत विशेषता पर प्रकाश डाला है।

अंत में 'उपसंहार' में शोध कार्य के निष्कर्ष के रूप में जो तथ्य सामने आए हैं उनका मूल्यांकन करने का प्रयास किया है।

इसके पाश्चात्य शोध कार्य में जिन आधार ग्रंथ तथा संदर्भ ग्रन्थों का प्रयोग हुआ है उसकी सूची दी गई है।

इस लघु शोध-प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण के लिए मैं अत्यंत कृतज्ञता पूर्वक अपने शोध निर्देशक आदरणीय **प्रो० सूरज पालीवाल जी** की आभारी हूँ जिन्होंने अध्ययन-अध्यापन कार्यों में व्यस्त रहने पर भी जिस सहानुभूति और सौहार्द के साथ इस शोध कार्य का निर्देशन किया है, इसके लिए शाब्दिक कृतज्ञता केवल औपचारिकता मात्र होगी। वस्तुत: इस महत कार्य के लिए मैं आजीवन ऋणी रहूँगी।

इस लघु शोध-प्रबंध के संदर्भ में **'डॉ० रूपेश कुमार सिंह '** के प्रति भी विशेष रूप से आभारी हूँ , जिन्होंने मेरे लघु शोध प्रबंध का विषय चयनित करने में मेरी मदद की। इसके साथ-साथ में विभाग के सभी गुरुजनों और कर्मचारियों का भी आभार व्यक्त करती हूँ। मैं 'श्री अरविंद महविद्यालय' के श्रद्धये **डॉ० कृष्ण लाल सिंह** और **डॉ० सुधीर प्रताप सिंह जी** के प्रति भी आभारी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर महत्वपूर्ण सुझाव व मार्गदर्शन दिया।

मैं अपने बड़े भाई धर्मेन्द्र और आशीष और अपनी बड़ी बहन पूनम के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने लघु शोध कार्य के दौरान अपना पूर्ण स्नहे व सहयोग प्रदान किया। इसके साथ ही मैं पूजा झिल्पे, भावना, पूजा, नीलम, पूजा पुरोहित, विजेंद्र मीना, बलवीर सिंह, मेहराज़ अली, अंकित अभिषेक, रवीन्द्र कुमार यादव, हिमांशु, सूर्य प्रकाश शुक्ला और सुनील के प्रति आभारी हूँ, जिनका प्रोत्साहन मुझे सदैव क्रियाशील बनाये रहा। इसके साथ-साथ पुस्तकालय के सदस्यों का भी आभार व्यक्त करती हूँ इसके साथ-साथ मैं सभी मार्गदर्शक व सहयोगियों को धन्यवाद देते हुए उनका आभर व्यक्त करती हूँ

इस लघु शोध-प्रबंध को मैं अपने पूज्यनीय माता-पिता जी को समर्पित करती हूँ, क्योंकि यह लघु शोध-प्रबंध उनके स्नेह व आशीर्वाद का ही प्रतिफल है।

आशु